Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 7 ~ Issue 6 (2019) pp: 64-67
ISSN(Online):2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

गुप्त सम्राटों की धार्मिक नीति

डा. लता व्यास
एसोसिएट प्रोफेसर
चौधरी बल्लू राम गोदारा राजकीय कन्या महाविद्यालय श्री गंगानगर

गुप्त सम्राटों को मुख्य रूप से वैष्णव धर्मानुयायी माना जाता है। गुप्त सम्राटों ने वैष्णव धर्म को राज्याश्रय देकर उसकी लोकप्रियता को चरमसीमा तक भी पहुँचा दिया। लेकिन गुप्त सम्राटों ने अन्य धर्मों के प्रति भी धार्मिक उदारता का परिचय दिया। उनकी इसी धार्मिक उदारता का फल था कि गुप्त सम्राटों में कुछ बौद्ध, और कुछ शैव भी हुए। एक परिवार में भिन्न भिन्न व्यक्ति भिन्न भिन्न धर्मों के अनुयायी हो सकते थे। गुप्त सम्राटों की धार्मिक सहिष्णुता का ज्ञान करने से पहले उनकी वंशावली और आदि का पुरुष का ज्ञान अतिआवश्यक है।

प्रारम्भिक गुप्त सम्राटों में धार्मिक सहिष्णुता– गुप्त वंशावली का परिचय देने के लिए हमारे पास अनेक अभिलेख हैं ही, साथ ही मोहरें भी प्रकाश डालती हैं। इन अभिलेखों में सबसे प्रमुख कुमार गुप्त का विलसड़ का स्तम्भ अभिलेख है। और एक स्कन्दगुप्त का बिहार स्तम्भ लेख तथा बुध गुप्त और विष्णुगुप्त की मोहरें प्रमुख है इन सभी में गुप्तों का आदि पुरुष का नाम श्रीगुप्त मिलता है। तथा बाद में चन्द्रगुप्त प्रथम का नाम आता है। श्रीगुप्त और उसके पुत्र घटोत्कच की उपाधि महाराज की मिलती हैं। इससे सूचित होता है कि वह दोनों साधरण शासक थे चन्द्रगुप्त प्रथम ने सर्वप्रथम महाराजाधिराज की उपाधि धारण की थी।

गुप्त सम्राटों ने वैदिक धर्म के विविध अनुष्ठानों व क्रियाविधियों को अपनाया और धर्म के अनुसार यज्ञ किए।

गुप्तों का प्रारम्भिक पुरुष श्रीगुप्त भी वैष्णव धर्म का अनुयायी था। श्रीगुप्त की धार्मिक सहिष्णुता का पता लगाने में चीनी यात्री इत्सिंग अति महत्वपूर्ण विवरण प्रस्तुत करता हैं।

इत्सिंग के विवरण से पता चलता है, कि गुप्तों के आदि पुरुष श्री गुप्त ने चीनी भिक्षुओं के लिए मृगशिखावन में एक मन्दिर बनवाया था तथा इसके खर्च के लिए 24 गाँव दान में भी दिये थे। चीनी यात्री राजा को ची–ली–की कहता है, जिसका संस्कृत में अनुवाद श्री गुप्त होता है।

इससे श्री गुप्त की धार्मिक सहिष्णुता का पता चल जाता है। उसके पश्चात् उसका पुत्र घटोत्कच राजा हुआ लेकिन वह एक साधारण शासक था इसलिए उसके बारे में अधिक जानकारी नहीं मिलती इसमें भी धार्मिक सहिष्णुता थी जो निम्न लिखित पंक्तियों से पता चलता है।

चन्द्रगुप्त प्रथम एवं घटोत्कच– तीसरी श0 के अन्त में बौद्ध धर्म के अधिकतर आचार्य हुए उन्होने कई ग्रन्थों की रचना की जिसमें प्रमुख असंग, वसुबन्ध एवं परमार्थ थे अंसग ने योचाचार अभियान प्रकरण और महायान सूत्रालंकार आदि ग्रन्थ लिखे, वसुबन्धु ने अपने विशतिका नामक ग्रन्थ में बौद्ध धर्म में विज्ञानवाद का विवेचन किया।

श्रीगुप्त एवं घटोत्कच के शासन का समय तीसरी श0 के अन्तिम में पड़ता है। उनके समय में इतने उच्च कोटि के ग्रन्थों एवं सिधान्तों की रचना के लिए समाज में शान्ति के वातावण की आवश्यकता होती जो धार्मिक उन्माद में नहीं हो सकती अतः घटोत्कच में धार्मिक सहिष्णुता रही होगी।

जैन धर्म के इतिहास में भी गुप्तकाल का बड़ा महत्व है क्योंकि जैन धर्म के श्वेताम्बर सम्प्रदाय की प्रथम महासभा बल्लभी में 313 ई0 में हुई थी जो घटोत्कच के शासन काल में पड़ता है। इससे घटोत्कच की सहिष्णुता सिद्ध होती है।

26 फरवरी सन् 320 ई0 को चन्द्रगुप्त प्रथम सिहांसनासीन हुआ। जिसे गुप्त साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक माना जाता है। चन्द्रगुप्त प्रथम ने लिच्छवि राजकुमारी के साथ विवाह किया था और उसने इस अवसर पर चन्द्रगुप्त कुमार देवी प्रकार के सोने के सिक्कों का प्रचलन भी किया था।

चन्द्रगुप्त प्रथम के सोने के सिक्कों से उसकी धार्मिक सहिष्णुता का पता चलता है क्योंकि इन सिक्कों के अग्रभाग पर राजा रानीं का अंकन है और राजा के बॉए हाथ के नीचे ''चक्रध्वज'' दिखाया गया है और पृष्ण भाग पर सिंहवाहिनी देवी दुर्गा का अंकन स्पष्ट है।

चक्रध्वज के आधार पर हम यह कह सकते है कि चन्द्रगुप्त वैष्णव धर्मावलम्बी था। अगर उसमें धार्मिक सहिष्णुता न होती तो वह सिक्कों के पृष्ठ भाग पर दुर्गा का अंकन न करवाता इससे यह बात और खुल जाती है कि गुप्त शासक देवताओं के साथ देवियों की भी पूजा करते थे। हालांकि देवी की

पहचान में विद्वानों में मत भिन्नता है। जहाँ एक ओर बनर्जी, अल्तेकर और मुखर्जी[5] इस देवी को दुर्गा मानते है। वहीं एलन, लक्ष्मी लेकिन वह इसके दुर्गा होने की भी सम्भावना मानते है। कुछ विद्वान इस मुद्रा को समुद्रगुप्त की मानते है जिसमें प्रमुख रूप से मुखर्जी, एस चटोपाध्याय तथा टी0पी0वर्मा आदि है। लेकिन चन्द्रगुप्त प्रथम

के रजत सिक्के भी मिले है। जिससे हमें स्वर्ण सिक्कों को चन्द्रगुप्त का मानने में सन्देह नहीं करना चाहिए दुर्भाग्यवश हमारे पास समुद्रगुप्त के पहले के ऐसे साक्ष्य नहीं मिलते कि जिनको प्रमाणिक मान कर चन्द्रगुप्त के बारे में अत्याधिक जानकारी दी जा सके।

चन्द्रगुप्त प्रथम के बाद उसका पुत्र समुद्रगुप्त गद्दी पर बैठा। हरीषेण द्वारा रचित प्रयाग प्रशस्ति में चन्द्रगुप्त प्रथम द्वारा समुद्रगुप्त को भरी सभा में राज्य प्रदान करने का वर्णन किया गया हैं। चन्द्रगुप्त ने अपने जीवन काल में ही समुद्रगुप्त को अपना उत्तराधिकारी बना दिया और स्वयं ने सन्यास ले लिया।

समुद्रगुप्त में धार्मिक सहिष्णुता–

समुद्रगुप्त अपने पिता के समय में ही 350 ई0 में बनें राजा बन गया था। वह एक महान साम्राज्य निर्माता था जिसने अपने साम्राज्य का अत्याधिक विस्तार किया उत्तर भारत के नौ राजाओं को अपनी साम्राज्यवादी नीति का शिकार बनाया तथा दक्षिण में भी उसने 12 राजाओं को परास्त किया और अपनी शक्ति का प्रसार किया।

समुद्रगुप्त की धार्मिक सहिष्णुता का पता लगाने के लिए हमारे पास पुरातात्विक, साहित्यिक, विदेशी यात्रियों के विवरण आदि पर्याप्त साक्ष्य हैं।

सर्वप्रथम हमें समुद्रगुप्त के अभिलेखों एवं सिक्कों का अवलोकन करने से पता चलता है कि वह वैष्णव धर्मानुयायी था। तथा अपनी विजयों के उपरान्त अश्वमेघ यज्ञ किया जिसका परिचय उसके उत्तराधिकारियों के अभिलेखो एवं उसके सिक्कों से चलता है।

समुद्रगुप्त वैष्णव होते हुए भी बौद्ध, शिव, जैन, एवं अन्य अनेक देवी देवताओं का आदर करता था। उसनें कई सिक्कों का प्रचलन किया जिसमें धार्मिक महत्व से जुड़ी हुई बातों का पता चलता है जिन सिक्कों में देवी देवताओं या अन्य चिन्हों का अंकन है उनमें मुख्य रूप से ध्वजाधारी प्रकार, दण्डधारी प्रकार, धनुर्धारी प्रकार, परशु धारी प्रकार, अश्वमेघ प्रकार, व्याघ्र निहन्ता प्रकार, वीणाधारी प्रकार हैं। समुद्रगुप्त के समय के अभिलेख भी मिले है जो धर्म के विषय पर प्रकाश डालते हैं लेकिन पहले हम सिक्कों से उसकी धार्मिक सहिष्णुता का पता लगाएगें और बाद में अभिलेखों से। समुद्रगुप्त के इन सभी सिक्कों में दो चीजे समान हैं एवं धार्मिक दृष्टि से अति महत्वपूर्ण हैं। एक गरूड़ ध्वज और दूसरा पृष्ठभाग में देवियों का अंकन हैं

बैदिक एवं ब्राह्मण धर्म –

1. ध्वजधारी प्रकार– इस प्रकार के 26 स्वर्ण सिक्के लखनऊ संग्राहालय में सुरक्षित हैं। इन सिक्कों के अग्रभाग में राजा खड़ा है। बाँए हाथ में गरूड़ध्वज तथा दाहिने हाथ से अग्नि में आहुति डाल रहा है। मुद्रा के किनारे वृत्ताकार लेख ''समर शत वितत विजयो जित रिपु रजितो दिवम जयति'' लिखा है पृष्ठभाग में प्रभामण्डल युक्त देवी (लक्षमी) सिंहासनासीन है।

2. दण्डधारी प्रकार– इन सिक्कों के अग्र भाग में भी राजा एक हाथ में दण्ड तथा दूसरे हाथ से अग्नि में आहुति डाल रहा है। तथा बायी ओर गरूड़ध्वज अंकित है। पृष्ठभाग में प्रभामण्डल युक्त लक्ष्मी सिहांसन पर बैठी दर्शायी गयी है। उसके हाथ में कार्नकोपिया तथा दाहिने हाथ में पाश है।

3. परशु धारी प्रकार

इस सिक्के में भारतीय धर्म की उपयुक्त वस्तुओं का अंकन जैसे– धनुष, परशु, अर्द्धचन्द्र युक्त ध्वज तथा वेदी के स्थान पर बाण का अकंन है। पृष्ठ भाग में कमलासन पर पैर रखे लक्ष्मी सिंहासन पर बैठी है।

*Corresponding Author: डा. लता व्यास

4. अश्वमेध एवं व्याघ्रहनन प्रकार

अश्वमेध प्रकार के सिक्के अग्रभाग पर यज्ञ यूप में बँधे हुए घोड़े का चित्र है। तथा मुद्रालेख उत्कीर्ण है'

'' राजाधिराजों पृथ्वी विजित्य दिवं जयत्या गृहीतवाजिमेधः''

पृष्ठभाग पर दत्तदेवी की आकृति के साथ–2 अश्वमेधपराक्रमः अंकित है। व्याघ्रहनन सिक्कों के पृष्ठ भाग पर मकरवाहिनी गंगा की ' आकृति उत्कीर्ण है।

इन सिक्कों में गरूड़ ध्वज विष्णु का प्रदर्शन करता है तो राधाकुमुद मुखर्जी भी यह विचार प्रकट करते है कि ये धनुष बाण विण्णु सारगीं की याद दिलाते हैं। दूसरी ओर के अकंन में लक्ष्मी का प्रदर्शन एवं कहीं दुर्गा का प्रदर्शन समुद्रगुप्त की देवी पूजा को प्रदर्शित करता है राधा कुमुद मुखर्जी का मानना है कि समुद्रगुप्त युद्धों में विजय प्राप्त करने के हेतु दुर्गा का भक्त हो गया था।

उसके गया ताम्रपत्र में यह वर्णन है कि उसने अपने माता–पिता की पुण्य वृद्धि के लिए गया विषय के अर्न्तगत रैवतिका तथा बल्तकैशज ग्राम को भारद्वाज गोत्र के तथा बहुवृच शाखा के पाठक गोपस्वामि नामक ब्राह्मण तथा ब्रह्मचारी को दान दिया था।

प्रयाग प्रशस्ति में उसे धनद,वरूण, इन्द्र, और अन्तक के समान बताया गया है। तथा कहा गया है कि वह कृतान्त परशु था। प्रभावती गुप्त के ताम्रपत्र में भी उसको अनेक अश्वमेध करने वाला कहा है। लेकिन सभी साक्ष्य उसे एक ही अश्वमेध करने वाला बताते है।

''जिस प्रकार शिव (पशुपति) की जटा जूट रूपी अर्न्तगुहा के बन्धन से उन्मुक्त होने के पश्चात् गंगा का जल तीनों लोकों को पवित्र करता है उसी भाँति उस सम्राट का सच्चित विमल यशदान, परायणता, बाहुबल एवं शास्त्रज्ञान के उत्कर्ष द्वारा अनेक मार्गों से शन्तिपूर्वक ऊपर उठता हुआ तीनों ही भुवनों को पवित्र करता है।''

समुद्रगुप्त के नालन्दा ताम्र पत्र में उल्लेख है कि समुद्रगुप्त द्वारा अपने पाँचवें वर्ष के 2 माघ को आनन्दपुर स्थिति जय स्कन्धावार में रहते समय क्रमिल विषय अर्न्तगत् भद्रपुष्करक ग्राम निवासी जयभट्ट स्वामी नामक ब्राह्मण को भूमि दान दी थी। इससे समुद्रगुप्त के ब्राह्मणों के प्रति उदार होने का पता चलता है। जो उसकी धार्मिक सहिष्णुता का अंग है।

समुद्रगुप्त के ऐरण शिलालेख में भी उसे प्रथु एवं राधव कहा गया है शिलालेख मे कहा गया है। ''सुवर्णदान करने में जो पृथु, राघव आदि, राजाओं से (बढ़ गया) क्रोध और प्रसन्नता में क्रम से यमराज और कुबेर के समान समुद्रगुप्त हुआ''

श्रीराम गोयल का यह भी कहना है कि ''हमारा आशय यह नहीं कि गुप्त शैव धर्म का आदर नहीं करते थे या उन्होंने बलात वैष्णव धर्म का प्रचार किया हमारा इतना ही कहना है कि सहिष्णु होते हुए भी उनके राजनीतिक दृष्टिकोण पर वैष्णव धर्म की छाया अवश्य आ जाती थी।

मेरी दृष्टि से प्रयाग प्रशस्ति में शिव के केश से गंगागमन वर्णन यह सिद्ध करता है कि ऐसा नहीं था। यदि राजनीति में धर्म की छाया गुप्तों में होती तो चन्द्रगुप्त अपनी पुत्री प्रभावती का विवाह वाकाटक वंश में क्यों करता जबकि उस समय तक वाकाटक नरेश शैव धर्मानुयायी था।

निष्कर्षः–

हमने गुप्त साम्राज्य के सभी शासकों का बारीकी से अध्ययन किया और उनकी धार्मिक सहिष्णुता का पता लगाया है सभी साक्ष्यों से यही सिद्ध होता है कि गुप्त सम्राटों ने सभी धर्मो को समान आदर किया था।

सत्यकेतु विद्यालंकार ने अपनी पुस्तक भारतीय संस्कृति का विकास में लिखा है कि गुप्तकाल में पौराणिक आर्य धर्म, बौद्ध धर्म और जैन धर्म भारत में साथ–साथ फल फूल रहे थे।

ए0एल0बशम ने अपनी पुस्तक अद्भुत भारत में लिखा है कि गुप्तकाल में बौद्ध भिक्षु हिन्दु जन समरोहों में प्रायः भाग लेते थे एक बौद्ध परिवार जो अपना प्रधान सहयोग मठ को प्रदान करता था जन्म, विवाह तथा मृत्यु के अवसरों पर सर्वदा ब्राह्मणों की सेवाओं पर आश्रित रहा करता था,, ऐसा तभी सम्भव हो सकता है जब राजा एवं राज्य धार्मिक सहिष्णुता की भावना रखते हों अन्ततः इससे गुप्त काल की धर्मिक सहिष्णुता सिद्ध होती है। गुप्त काल में स्थापत्य कला, मूर्ति कला एवं साहित्य आदि ने अपनी चरम सीमा को प्राप्त कर लिया किसी भी देश की कला वहाँ की राजनैतिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक कहानी लिखती है ऐसा मेरा मानना है और इन सबका विकास राजाश्रय एवं शान्ति के वातावरण

*Corresponding Author: डा. लता व्यास

के अलावा नहीं हो सकता और शान्ति के लिए धार्मिक सहिष्णुता को राजाओं एवं राज्यों द्वारा अपनाना अति आवश्यक है, अतः इन सब का विकास ही था जिसके कारण गुप्तकाल स्वर्ण युग कहलाने लगा वह स्वर्ण युग गुप्तों की धार्मिक सहिष्णुता को ही व्यक्त करता है।

संदर्भ सूचि

1. झा एवं श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास
2. सत्यकेतु विद्यालंकार, प्राचीन भारत का धार्मिक सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास
3. वासुदेव उपाध्याय, गुप्त अभिलेख
4. वी0सी0 पाण्डेय, अनूप पाण्डेय, ए न्यू हिस्ट्री आफ एनशन्ट इण्डिया
5. द्विजेन्द्र नारायण झा एवं कृष्ण मोहन श्री माली, पूर्वोधृत
6. उदय नारायण राय, गुप्त सम्राट और उनका काल
7. वी0सी0 पाण्डेय, अनूप पाण्डेय, पूर्वोधृत
8. परमेश्वरीलाल गुप्त, गुप्त साम्राज्य
9. श्रीराम गोयल, प्राचीन भारत का इतिहास (320से 550ई0तक
10. राधाकुमद मुखर्जी, गुप्त युग
11. श्रीराम गोयल, पूर्वोधृत
12. वी0 सी0 पाण्डेय अनूप पाण्डेय, ए न्यू हिस्ट्री आफ एशन्ट इण्डिया
13. विमल चन्द्र पाण्डेय, पूर्वोक्त

*Corresponding Author: डा. लता व्यास